

प्रतिवेद्य

भारतीय उच्चतम न्यायालय के समक्ष  
सिविल अपीलीय अधिकारिता  
सिविल अपील संख्या— 5040 / 2008

राकेश एवं अन्य

.....अपीलार्थी(गण)

बनाम

राजस्व परिषद उ०प्र० एवं अन्य

.....प्रत्यर्थी(गण)

निर्णय

न्यायमूर्ती अशोक भूषण,

इलाहाबाद उच्च न्यायालय के 03.03.2006 दिनांकित निर्णय के विरुद्ध यह अपील दाखिल दो रिट याचिकाओं, रिट याचिका संख्या 16105/1983 अपीलार्थी के पूर्व हितधारी द्वारा दाखिल की गई और रिट याचिका संख्या 3001/1984 में प्रत्यर्थी सं० 4 द्वारा दाखिल दो रिट याचिकाओं को निर्णीत करने के लिये दाखिल की गयी है।

2. इस अपील को निर्णीत करने के लिए वाद के आवश्यक संक्षिप्त तथ्य इस प्रकार है :-

2.1— पुरुषोत्तम ग्राम पिलखाना, जिला भाहजहाँपुर में स्थित कृषि योग्य प्लाट संख्या 243 एवं 503 तथा प्लाट संख्या 521 के एक तिहाई भाग का सीरदार (किरायेदारी का एक वर्ग) दिनांक 25.11.1974 को पुरुषोत्तम ने भूमि राजस्व का

अस्वीकरण

“क्षेत्रीय भाषा में अनुवादित निर्णय वादी के अपनी भाषा में समझने हेतु निर्विधत प्रयोग के लिये है और किसी अन्य उद्देश्य के लिये प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी व्यावहारिक और सरकारी उद्देश्यों के लिये, निर्णय का अंग्रेजी संस्करण प्रामाणिक माना जायेगा तथा निष्पादन और क्रियान्वयन के उद्देश्यों के लिये मान्य होगा”।

20 गुना जमा किया और उत्तर प्रदेश जमींदारी विनाश और भूमि-व्यवस्था अधिनियम, 1950 के अनुसार भूमिधर अधिकारों को प्रदान करने को एक आवेदन पत्र दिया। 26.11.1974 को, पुरुषोत्तम ने उक्त तीनों प्लोटों को अयुधि @ अयोध्या के पक्ष में विक्रय विलेख निष्पादित किया। 23.05.1975 को प्लॉट संख्या 204 और 503 के लिए भूमिधर सनद के प्रदान करने के लिए पुरुषोत्तम का आवेदन पत्र निरस्त कर दिया गया, पुरुषोत्तम द्वारा आदेश दिनांक 23.05.1975 को चुनौती देते हुए एक पुर्नयाचना आवेदन दाखिल की गयी। दिनांक 05.01.1976 को सहायक कलेक्टर के आदेश द्वारा प्लॉट संख्या 521 के सम्बन्ध में पुरुषोत्तम के नाम भूमिधर सनद प्रदान की गयी। जिसके पहले दिनांक 04.12.1975, को पुरुषोत्तम की मृत्यु हो गयी थी।

**2.2—** दिनांक 28.01.1977 को धोषित उत्तर प्रदेश जमींदारी विनाश और भूमि-व्यवस्था अधिनियम, 1950 ( उ0प्र0 अध्यादेश संख्या 1/1977) द्वारा प्रत्येक सीरदार को उत्तर प्रदेश जमींदारी विनाश और भूमि-व्यवस्था अधिनियम, 1950 की धारा 130 और 131 में सन्दर्भित भूमिधर को अन्तरणीय अधिकार प्रदान किए गये।

**2.3—** अयुधि @ अयोध्या ने पुरुषोत्तम द्वारा दिनांक 26.11.1974 को निष्पादित विक्रय विलेख के आधार पर दो वाद-वाद संख्या 30/1978 में प्लॉट संख्या 243 में भूमिधर अधिकारों की उद्घोषणा के लिए प्रार्थना और वाद संख्या 031/1978 में प्लॉट संख्या 521 में भूमिधर अधिकारों की उद्घोषणा को दावा करने के लिए दाखिल किया।

**2.4—** विचारण न्यायालय ने दोनों वादों को दिनांक 23.03.1979 के निर्णय द्वारा खारिज कर दिया। विचारण न्यायालय के निर्णय के विरुद्ध अपीलार्थी द्वारा दो अपील दाखिल की गयी। अपर आयुक्त ने प्लॉट संख्या 521 के सम्बन्ध में वाद संख्या 31/1978 को डिक्री करते हुए अपील संख्या 436/6/1979 को स्वीकृति दी जिसके सम्बन्ध में सनद प्रदान किया गया था, लेकिन अपर आयुक्त ने वाद संख्या 30/1978 से उद्भूत अपील संख्या 435/5/1979 को निरसित कर दिया। अपीलार्थी और प्रत्यर्थी दोनों ने अपर आयुक्त के निर्णय के विरुद्ध राजस्व बोर्ड के समक्ष द्वितीय अपीलों को निरस्त कर दिया। अपीलार्थी और प्रत्यर्थी दोनों ने अपर आयुक्त के निर्णय के विरुद्ध राजस्व बोर्ड के समक्ष द्वितीय अपील दाखिल

#### **अस्वीकरण**

“क्षेत्रीय भाषा में अनुवादित निर्णय वादी के अपनी भाषा में समझने हेतु निर्विधत प्रयोग के लिये हैं और किसी अन्य उद्देश्य के लिये प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी व्यावहारिक और सरकारी उद्देश्यों के लिये, निर्णय का अंग्रेजी संस्करण प्रामाणिक माना जायेगा तथा निष्पादन और क्रियान्वयन के उद्देश्यों के लिये मान्य होगा”।

की। राजस्व बोर्ड ने अपने निर्णय दिनांक 18.11.1983 द्वारा अपीलों को निरस्त कर दिया।

**2.5—** पक्षकारों ने राजस्व बोर्ड के आदेश के विरुद्ध रिट याचिका दाखिल की। राम बिलास रिट याचिका के लम्बित रहते मर गये जिनके उत्तराधिकारी अभिलेख पर लाये गये। रिट याचिका संख्या 16105/1984 अपीलार्थी के पूर्वहितधारी द्वारा दाखिल की गयी जबकि रिट याचिका संख्या 3020/1984 प्रत्यर्थी गणों द्वारा दाखिल की गयी थी। माननीय उच्च न्यायालय द्वारा अपने आक्षेपित निर्णय दिनांकित 03.03.2018 के द्वारा प्रत्यर्थी द्वारा दाखिल रिट याचिका की स्वीकृती दी और अपीलार्थी द्वारा दाखिल रिट याचिका निरस्त कर दिया। वाद संख्या 30/1978 में माननीय उच्च न्यायालय के निर्णय द्वारा भी ड्रिकी मान ली गयी। उक्त निर्णय से पीड़ित अपीलार्थी, इस अपील मे आया है

**3.—** अपीलार्थी की ओर से विद्वान अधिवक्ता श्री प्रमोद स्वरूप, वरिष्ठ अधिवक्ता ने कहा हे कि प्रत्यर्थी द्वारा दाखिल दोनों वाद, इस तथ्य के दृष्टिगत कि पुरुषोत्तम को दिनांक 26.11.1974 को सीरदारी अधिकारों को निष्पादित करके का अधिकार नहीं था, निरस्त किए जाने योग्य है। यद्यपि, उसने भूमिधारी सनद के लिए एक आवेदन प्रस्तुत किया था लेकिन उसके सनद की मंजूरी से पहले दिनांक 05.12.1976 को मर गये होने से, भूमिधर अधिकारों को उसके विधिक उत्तराधिकारियों में उद्भूत होने चाहिए और वादियों को भूमिधरी धोषित होने का कोई अधिकार नहीं है। उन्होंने आगे कहा है कि प्लॉट संख्या 243 और 503 से सम्बन्धित मामले के दृष्टिगत, भूमिधारी सनद के लिए आवेदन को 23.05.1975 को अस्वीकृत कर दिया गया था, इसलिए उक्त प्लॉटों से सम्बन्धित वाद संख्या 30/1978 निरस्त किए जाने योग्य है। अपीलार्थी के विद्वान अधिवक्ता ने अपने मत को माननीय उच्च न्यायालय इलाहाबाद के **राम सुबोध और अन्य बनाम उपनिदेशक, समेयक, उ0प्र0 फैजाबाद और अन्य, 1982 एल0 जे0 1952** पर धारित किया।

**4.** प्रत्यर्थी के विद्वान अधिवक्ता श्री अभिषेक चौधरी ने अपीलार्थी के विद्वान अधिवक्ता के तर्कों का खण्डन करते हुए तर्क दिया कि प्रत्यर्थी द्वारा दाखिल दोनों वादों की अज्ञप्ति प्राप्त करने के योग्य है, चूँकि पुरुषोत्तम (मृतक) ने भूमि राजस्व का 20 गुना जमा किया गया होना और भूमिधर अधिकारों की मंजूरी के लिए दिनांक 25.

#### अस्वीकरण

“क्षेत्रीय भाषा में अनुवादित निर्णय वादी के अपनी भाषा में समझने हेतु निर्विधत प्रयोग के लिये हैं और किसी अन्य उद्देश्य के लिये प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी व्यावहारिक और सरकारी उद्देश्यों के लिये, निर्णय का अंग्रेजी संस्करण प्रामाणिक माना जायेगा तथा निष्पादन और क्रियान्वयन के उद्देश्यों के लिये मान्य होगा”।

11.1974 को एक आवेदन दिया, उ0 प्र0 जमींदारी उन्मूलन और भूमि सुधार अधिनियम 1950 की धारा 137 के प्रावधानों के दृष्टिगत, आवेदन देने की तिथि अर्थात् 25.11.1974 से भूमिधर अधिकारों को अनुमति प्रदान किया होना मानना चाहिए। प्लॉट संख्या 243 और 503 के सम्बन्ध में, सनद की अनुमति के जिस आवेदन को दिनांक 23.05.1975 को अस्वीकार कर दिया गया था, पुरुषोत्तम द्वारा एक पुनरीक्षण दाखिल की गयी, जो उस समय विचाराधीन था जब सीरदारों को भूमिधन अधिकार प्रदान करने वाला उ0 प्र0 अध्यादेश संख्या 01 सन 1977 प्रवर्तित हुआ जिसके द्वारा पुनरीक्षण उपशमनीत हो गयी।

5. हमने पक्षकारों के विद्वान अधिवक्ताओं को सुना है और अभिलेखों का अवलोकन किया है।

6. उच्च न्यायालय ने अपने आक्षेपित निर्णय में यह दृष्टिगत किया कि जहाँ तक प्रत्यर्थी द्वारा दाखिल वाद संख्या 31/1978 का सम्बन्ध था, पुरुषोत्तम मृतक के पक्ष में भूमिधरी सनद प्रदान किया गया था, यद्यपि, उसकी मृत्यु के पश्चात् लेकिन उक्त सनद पुरुषोत्तम को भूमिधर बनाने में 25.11.1974 के प्रभाव से [31/1978](#) में आज्ञाप्ति प्रदान करने में कोई गलती नहीं की गयी थी प्रत्यर्थी द्वारा दाखिल वाद संख्या [30/1978](#) में आते हैं तो उच्च न्यायालय ने यह दृष्टिकोण लिया कि इस तथ्य के दृष्टिगत कि पुरुषोत्तम के आवेदन की अस्वीकृति को चनौती दी थी, जो उस समय विचाराधीन था जब अध्यादेश संख्या [01/1977](#) के कारण कार्यवाही उपशमित हो गयी, पुरुषोत्तम के विधिक उत्तराधिकारियों पुरुषोत्तम के हित के विपरीत तर्क नहीं अधिनियम की धारा 43 पर भी आश्रित है।

7. पक्षकारों के विद्वान अधिवक्ता के तर्कों पर विचार करने से पहले हमें उ0 प्र0 जमींदारी उन्मूलन और भूमिसूधार अधिनियम, 1950 के प्रावधानों को देखना आवश्यक होगा। अधिनियम की धारा 134 सिरदार द्वारा भूमिधर अधिकारों के अर्जन को प्रावधानित करता है। धारा 134(1) (संगत समय पर अस्तित्वमान) इस प्रकार है—

**धारा 134 : सिरदार द्वारा भूमिधारी अधिकारों का अधिग्रहण :—**

#### **अस्वीकरण**

“क्षेत्रीय भाषा में अनुवादित निर्णय वादी के अपनी भाषा में समझने हेतु निर्विधत प्रयोग के लिये हैं और किसी अन्य उद्देश्य के लिये प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी व्यावहारिक और सरकारी उद्देश्यों के लिये, निर्णय का अंग्रेजी संस्करण प्रामाणिक माना जायेगा तथा निष्पादन और क्रियान्वयन के उद्देश्यों के लिये मान्य होगा”।

(1) : धारा 134 के खंड ब को सन्दर्भित यदि एक सीरदार, सीरदार न होते हुए, आवेदन के दिनांक पर, उस भूमि के लिये जिस भूमि का वह सीरदार है भू राजस्व के 20 गुना देय अथवा उचित देय धनराशि राज्य सरकार को जमा करता है वह हकदार होगा जिस दिनांक से, वह, सहायक कलेक्टर को इस सम्बन्ध में सम्यक रूप से बनाये गये एक आवेदन पर, उस दिनांक को जिस पर धनराशि जमा की गई प्रभाव से एक उदधोषणा का हकदार होगा कि उसने ऐसी भूमि के सम्बन्ध में धारा 137 में बताये गये अधिकारों को अर्जित कर लिया है।

**स्पष्टीकरण 1 :** इस उपधारा के उद्देश्यों के लिये अभिव्यक्ति “ भूमि ” में भूमि का भाग शामिल है।

**स्पष्टीकरण 2 :** इस उपधारा के उद्देश्यों के लिये राजस्व देय होगा।

(अ) : धारा 246 की उपधारा 1 के खण्ड (अ) के परन्तुक में सन्दर्भित भूमि के सम्बन्ध में, समस्त बढोत्तरियों को लेकर प्राप्त की गई राशि : और,

(ब) : ऐसी भूमि के सम्बन्ध में जिस पर धारा 247 का परन्तुक लागू होता है, ऐसी राशि जो उस धारा के अन्तर्गत अनुवांशिक दर पर तय की गयी हो।

**8 :** धारा 137 प्रमाणपत्रों का अनुदान प्रदान करता है। धारा 137 जो सम्बन्धित समय पर मौजूद भी, को नीचे उदगृत किया गया है।,

**“137 : प्रमाण पत्र की मजूरी :- (1)** यदि आवेदन सम्यक रूप से बनाये गये है और सहायक कलेक्टर उससे सन्तुष्ट यदि आवेदन की धारा कीधारा 134 में कथित उदधोषणा के हकदार है तो वह प्रमाणपत्र का अनुदान उस प्रभाव में लागू होगी।

**(2) :** उपधारा (1) के अन्तर्गत प्रमाण पत्र की मजूरी के लिए धारा 134 के उपधारा (1) में सन्दर्भित जिस दिनांक पर जमा की गयी है, सिरदार,

#### **अस्वीकरण**

“क्षेत्रीय भाषा में अनुवादित निर्णय वादी के अपनी भाषा में समझने हेतु निर्विधत प्रयोग के लिये है और किसी अन्य उद्देश्य के लिये प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी व्यावहारिक और सरकारी उद्देश्यों के लिये, निर्णय का अंग्रेजी संस्करण प्रामाणिक माना जायेगा तथा निष्पादन और क्रियान्वयन के उद्देश्यों के लिये मान्य होगा”।

(अ) धारण किये गये भूमि का भूमिधर बनेगा और माना जायेगा अथवा उसके सम्बन्ध में जिसमें प्रमाणपत्र को मंजूरी प्रदान करने का भाग है। और

(ब) : अतः उसके भाग अथवा धारण की गई भूमि के लिये ऐसी कम की गई राशि के योग्य होगा। जैसा मामला हो, आवेदन के दिनांक पर देय अथवा उचित देय धनराशि का आधा देय होगा

आगे प्रतिबन्ध यह है कि धारा 134 के स्पष्टीकरण 2 को सन्दर्भित मामलों में सीरदार, धारा 246 अथवा 247 के अन्तर्गत अवधि में देय धनराशि को समय समय पर देय आधी धनराशि को भुगतान को दायी होगा।

**स्पष्टीकरण :-** खण्ड (ब) के उद्देश्यों के लिये, सीरदार के द्वारा उपरोक्त दिनांक पर भू राजस्व देय होगा, जहाँ यह लागू होने वाली वंशानुगत दरों पर गणना की उस राशि से दोगुना तक बढ़ सकता है। ऐसी धनराशि के समान माना जायेगा।

(2-अ) जहां धारा 134 की उपधारा 1 में निर्दिष्ट राशि कृषि वर्ष के पहले दिन के अलावा किसी अन्य तिथि को जमा की जाती है, भूमिधर द्वारा उप खंड 2 के खंड ख के तहत देय भूमि राजस्व, शेष कृषि वर्ष के लिए जमा की गई राशि को इस तरह से निर्धारित किया जाएगा जैसा कि निर्धारित किया जा सकता है

9. हम पहले प्रत्यर्थी द्वारा दाखिल वाद संख्या 31/1978 को लेते हैं जिसके सम्बन्ध में प्लॉट संख्या-521 के लिए घोषणा मांगी गयी थी। प्लॉट संख्या-521 के सम्बन्ध में पुरुषोत्तम के नाम दिनांक-05.01.1976 को भूमिधरी सनद जारी की गयी। अपर आयुक्त, राजस्व बोर्ड और उच्च न्यायालय ने यह दृष्टिकोण लिया कि भूमिधरी प्रमाणपत्र पुरुषोत्तम द्वारा आवेदन के दिनांक से सम्बन्धित रहेगी और उसके द्वारा प्लॉट संख्या-521 के लिए निष्पादित विक्रय पत्र वैध था। इस न्यायालय को जमींदारी उन्मूलन और भूमि सुधार अधिनियम-1950 की धार-134 और-137 के साथ-साथ सम्पत्ति अन्तरण अधिनियम

#### अस्वीकरण

“क्षेत्रीय भाषा में अनुवादित निर्णय वादी के अपनी भाषा में समझने हेतु निर्विधत प्रयोग के लिये हैं और किसी अन्य उद्देश्य के लिये प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी व्यावहारिक और सरकारी उद्देश्यों के लिये, निर्णय का अंग्रेजी संस्करण प्रामाणिक माना जायेगा तथा निष्पादन और क्रियान्वयन के उद्देश्यों के लिये मान्य होगा”।

की धारा—43 **रामप्यारे बनाम राम नारायन और अन्य (1985) 2 एस. सी. सी.—162** में विचार का अवसर था उपरोक्त वाद में, सिरदार किरायेदार ने दिनांक 28.08.1961 को भूमिधरी वनद की मंजूरी प्रदान करने के लिए एक आवेदन दिया और उसी दिन भूमि राजस्व जमा किया और उसने अपीलकर्ता को भूमि बेच दी। दिनांक 30.10.1961 को प्रमाणपत्र जारी किया गया। सिरदार के पुत्रों द्वारा विक्रय विलेख को रद्द करने की प्रार्थना करते हुए वाद दाखिल किया गया उच्च न्यायालय ने वाद को डिकी कर दिया जिसके विरुद्ध अपील दाखिल की गयी। इस न्यायालय ने अवधारित किया कि सम्पत्ति अन्तरण अधिनियम की धारा 43 प्रयोज्य थी और खाताधारक ने भूमिधरी अधिकार को प्राप्त किया और मतबर मल के पुत्रों के द्वारा दाखिल वाद निरस्त किए जाने योग्य था उ0प्र0 जमींदारी उन्मूलन और भूमि सुधार अधिनियम 1951 की धारा 134 तथा 137 को उद्धृत करते हुए इस न्यायालय ने पैरा 4 में निम्नलिखित को प्रतिपादित किया—

“4. धानी राम बनाम जोखू में दिये गये निर्णय को न्यायमूर्ती एस. डी. खेर ओर न्यायमूर्ती आर0 बी0 मिश्रा से बनी अन्य डिवीजन बेंच ने रामस्वरूप बनाम डिप्टी डायरेक्टर, समेकन, आइ.एल.आर. (1971) 1 इलाहाबाद 698 में अनुमोदित किया। दूसरे वाद में विद्वान न्यायाधीश ने आगे मत अभिव्यक्त किया कि इस तरह की परिस्थिति में जेसा कि हे इसका कोई कारण नहीं था कि स्वत्व के निर्धारण के लिए जेसा कि वह था, सम्पत्ति अन्तरण अधिनियम की धारा 43 का सहारा क्यों नहीं लिया जान चाहिए। हम रामस्वरूप बनाम उपनिदेशक, के समेकन में विद्वान न्यायाधीशों के तर्क से सहमत हे उस स्थिति में मामला सम्पत्ति अन्तरण अधिनियम की धारा 43 की प्रयोज्यता के प्रश्न पर विचार करने के लिए समेकन के उपनिदेशक और विधि के अनुसार मामला के निस्तारण की कार्यवाही के लिए प्रेषित किया गया। वर्तमान मामले में, तथ्य स्वयं के बारे में बताते हैं और हम नहीं सोचते हैं कि सम्पत्ति अन्तरण अधिनियम की धारा 43 की प्रयोज्यता के प्रश्न पर निर्णय के लिए वाद को अधीनस्थ न्यायालय को प्रतिप्रेषित करना आवश्यक है। उत्तर प्रदेश जमींदारी उन्मूलन अधिनियम की धारा 134 के अन्तर्गत जमा की गई राशि 28 अक्टूबर, 1961 को बनायी गयी और उसी दिन मतबर मल द्वारा विक्रय विलेख का निष्पादन किया गया। यह स्पष्ट है कि मतबर मल ने भूलवश क्रेता को व्यपदेशित किया कि वह सम्पत्ति

#### अस्वीकरण

“क्षेत्रीय भाषा में अनुवादित निर्णय वादी के अपनी भाषा में समझने हेतु निर्विधत प्रयोग के लिये हैं और किसी अन्य उद्देश्य के लिये प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी व्यावहारिक और सरकारी उद्देश्यों के लिये, निर्णय का अंग्रेजी संस्करण प्रामाणिक माना जायेगा तथा निष्पादन और क्रियान्वयन के उद्देश्यों के लिये मान्य होगा”।

को अन्तरित करने के लिए प्राधिकृत था और ऐसी सम्पत्ति को प्रतिफल के बदले अन्तरित करने की प्रवचना की। धारा 134 के अन्तर्गत अपेक्षित ६ तनराशि को विक्रय विलेख के निष्पादन के ही दिन जमा करना यह स्थापित करने के लिए पर्याप्त है विक्रय विलेख मतबर मल द्वारा एक भूलवश प्रतिनिधित्व का परिणाम था यह भी स्पष्ट है कि वर्तमान वादीगण जो कि विक्रेता मतबर मल के पुत्रगण हैं, सदभाव में अन्तरित होने का दावा संभवतः नहीं कर सकते हैं जिसका वास्तव में वे दावा नहीं कर सकते हैं धारा 43 इस स्थिति में लागू होती है, हालांकि अपीलार्थियों के विद्वान अधिवक्ता ने जुम्मा मस्जिद बनाम कोदिमनीयेन्द्र देवीआह को उद्धृत करते हुए सम्पत्ति अन्तरण अधिवक्ता की धारा 43 की प्रयोज्यता को इंकार किया। उन्होंने विद्वान न्यायाधीशों के निम्नांकित अवलोकन की ओर हमारा ध्यान आकर्षित किया—

“ अब धारा 43 में अगले अपवाद को पढ़ने का अपीलार्थी द्वारा जोर देकर यह कारण दिया गया है कि यदि यह ऐसे व्यक्तियों द्वारा अन्तरण पर लागू मान लिया जाता है जिन्हें केवल संभाव्य उत्तराधिकार प्राप्त है अन्तरण की तिथि पर तो यह धारा 6(अ) अवैद्य कारण प्रभाव डालेगा। लेकिन धारा 6(अ) और धारा 43 दो भिन्न विषय से सम्बन्धित हैं और उनमें कोई आवश्यक अन्तर्विरोध नहीं है, धारा 6(अ) इसमें बतायी गयी सम्पत्ति में हितों के सरल अन्तरण को प्रतिसिद्ध करता है। धारा 43 उन अन्तरणकर्ता द्वारा हक के व्यपदेशन पर विचार करता है। जिसके पास अन्तरण के समय हक नहीं था, और प्रावधानित करता है कि अन्तरणकर्ता उस हक से बाध्य होगा जो अन्तरणकर्ता वाद में अर्जित कर लेता है धारा 6(अ) सारवान विधि का नियम अधिनियमित है जबकि धारा 43 विबन्धन का नियम अधिनियमित करता है जो कि साक्ष्य में से एक है। ये दो प्रावधान अलग-अलग क्षेत्रों और अलग-अलग परिस्थितियों पर कार्य करते हैं और हमें उनके बीच विरोध को पढ़ने अथवा दूसरे के संदर्भ द्वारा एक के विस्तार को कम करने

#### **अस्वीकरण**

“क्षेत्रीय भाषा में अनुवादित निर्णय वादी के अपनी भाषा में समझने हेतु निर्विधत प्रयोग के लिये हैं और किसी अन्य उद्देश्य के लिये प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी व्यावहारिक और सरकारी उद्देश्यों के लिये, निर्णय का अंग्रेजी संस्करण प्रामाणिक माना जायेगा तथा निष्पादन और क्रियान्वयन के उद्देश्यों के लिये मान्य होगा”।



का कोई आधार नहीं दिखाई देता है। हमारे विचार में दोनों अपनी स्वयं की शर्तों पर पूरा प्रभाव रखते हैं/सकते हैं। अपने अपने क्षेत्र में यह धारण करना कि उस व्यक्ति द्वारा अन्तरण जो अन्तरण कि तिथी पर केवल सम्भाव उत्तराधिकार रखता है, धारा 43 में दी गयी सुरक्षा के अन्तर्गत नहीं है, यह विस्तृत क्षेत्र में इसकी उपयोगिता को नष्ट करेगा।”

हम यह देखने में असमर्थ हैं कि किन मामलों में ये अवलोकन प्रत्यर्थीगण की सम्भवतः मदद कर सकता है समान निर्णय में, मद्रास उच्च न्यायालय के आफीसीयल असाइनी, मद्रास बनाम सम्राट नायडू ए. आइ.आर. 1933 एम.ए.डी. के निर्णय को उद्धृत करते हुए यह अवलोकन किया गया—

आलोचना के लिए यह तर्क है कि यह धारा 43 के अन्तर्गत दिए सिद्धान्त की अपेक्षा करता है। जैसा कि पहले ही बताया गया है कि यह धारा विवन्धन का नियम पस्तुत करती है और अधिनिमित्त करती है कि एक व्यपदेशन पर कोई व्यक्ति कार्य करता है तो उसके विरुद्ध कहने पर सुना नहीं जाना चाहिए। यह अतात्विक है कि अन्तरणकर्ता व्यपदेशन करने में सदभावना पूर्वक कार्य करता है या केवल यह तात्विक है क्या अन्तरिति को भ्रमित किया गया है। यह उल्लेखनीय है कि निर्णय जब दिया गया, धारा 43 के सुसंगत शब्द थे ‘जहाँ एक व्यक्ति कपटपूर्वक या भूलवश व्यपदेशन करता है’ और यह बल देता है कि धारा के उद्देश्य के लिए यह महत्व नहीं रखता है कि क्या अन्तरणकर्ता ने कपटपूर्वक या अबोधपूर्वक किया है और क्या तात्विक है यह है कि उसने व्यपदेशन किया और अन्तरिती ने उस पर कार्य किया। जहाँ अन्तरिती यह तथ्य जानता था कि अन्तरणकर्ता हक नहीं रखता था। जिसका यह व्यपदेशन करता है कि वह रखता है, जब अन्तरण हो रहा है तब उस पर कार्य किया गया होना

#### अस्वीकरण

“क्षेत्रीय भाषा में अनुवादित निर्णय वादी के अपनी भाषा में समझने हेतु निर्विधत प्रयोग के लिये हैं और किसी अन्य उद्देश्य के लिये प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी व्यावहारिक और सरकारी उद्देश्यों के लिये, निर्णय का अंग्रेजी संस्करण प्रामाणिक माना जायेगा तथा निष्पादन और क्रियान्वयन के उद्देश्यों के लिये मान्य होगा”।

नहीं कहा जा सकता। धारा 43 का तब कोई प्रयोग नहीं होगा और अन्तरण धारा 6(अ) के अन्तर्गत विफल होगा। लेकिन जहाँ अन्तरिति व्यपदेशन पर कार्य करता है इसका कोई कारण नहीं है क्यों उसे धारा 43 में प्रतिपादित साम्यिक सिद्धान्त का लाभ नहीं प्राप्त करना चाहिए, हालांकि अन्तरणकर्ता का कार्य कपटपूर्ण रहा हो। ”

**10. अन्य निर्णय वर्तमान वाद से सम्बन्धित देव नन्दन ओर अन्य बनाम राम सरन और अन्य, (2000) 3 एस.सी.सी 440** का है। उक्त वाद में, बेचन कृषी भूमि का सीरदार था। उसने दिनांक 25.08.1964 को भूमिधरी सनद की मंजूरी प्राप्त करने के लिए एक आवेदन दिया और दिनांक 25.08.1964 को उसने वादी-अपीलकर्ता को भूमि का विक्रय विलेख निष्पादित किया। बेचन के पक्ष में भूमिधन सनद की मंजूरी का कोई ओदश पारित होता उससे पहले वह दिनांक 15.09.1964 को मर गये। बेचन की विधवा ने दिनांक 09.02.1965 को भूमि बेच दी। दिनांक 25.08.1964 के प्रभाव से जिस दिनांक पर आवेदन किया गया था, बेचन के पक्ष में दिनांक 09.02.1965 को सनद जारी कर विक्रय विलेख को चुनौती देते हुए एक वाद दाखिल किया। उच्च न्यायालय ने अवधारित किया कि दिनांक 25.08.1964 को बेचन ने कोई अधिकार हक या हित प्राप्त नहीं किया था, वह इसलिए वादी-अपीलकर्ता के पक्ष में विक्रय विलेख को निष्पादित करके कोई अधिकार अन्तरित नहीं कर सकता। इस न्यायालय ने धारा 134 और 137 के प्रावधानों को उद्धृत किया और अवधारित किया कि धोषणा उस दिनांक से जब धनराशि जमा की गयी है, प्रभाव में आनी चाहिए। प्रस्तर 7 में निम्नांकित प्रतिपादित किया गया है:-

“7. धारा 134 अपनी साधारण भाषा से यह संकेत करती है और बताती है कि आवेदन किया जाने पर और भूमि राजस्व का 10 गुना भुगतान किए जाने पर सीरदार ” उस तिथी के प्रभाव से जिस पर धनराशि जमा की गयी थी ” इस धोषणा का हकदार होता है कि उसने अधिनियम की धारा 137 में दिये गये अधिकारों को प्राप्त कर लिया है। यह धारा उस तिथी का स्पष्ट उल्लेख करती है जिस तिथी से अधिकार अर्जित किए हुए माने जायेंगे अर्थात् वह तिथि जिस पर धारा 14 में आपेक्षित भुगतान किया गया है। यह स्पष्टतः समय के बिन्दु की अनिश्चितता को दूर करती है जब हक

#### अस्वीकरण

“क्षेत्रीय भाषा में अनुवादित निर्णय वादी के अपनी भाषा में समझने हेतु निर्विधत प्रयोग के लिये है और किसी अन्य उद्देश्य के लिये प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी व्यावहारिक और सरकारी उद्देश्यों के लिये, निर्णय का अंग्रेजी संस्करण प्रामाणिक माना जायेगा तथा निष्पादन और क्रियान्वयन के उद्देश्यों के लिये मान्य होगा”।

को उस तारीख को निश्चित करते हुए जब धनराशि जमा की गयी अन्तरित किया जाता है। यह अतात्विक होगा कि धारा 137 के अन्तर्गत धोषणा कब की गयी क्योंकि यह धोषणा उस तिथी से प्रभावशील होगी जब धनराशि जमा की गयी है।”

11. यह तर्क है कि सनद की मंजूरी से पहले आवेदक मर गया था इसको भी इस न्यायालय द्वारा प्रस्तर 9 में विचार में लिया गया और यह अवधारित किया गया कि प्रमाणपत्र भूतलक्षी प्रभाव रखेगा। उच्च न्यायालय का दृष्टिकोण नामंजूर ( अननुमोदित ) किया गया और वाद आज्ञाप्ति होने का हकदार होना अवधारित किया गया। प्रस्तर संख्या 09 और 10 में निम्नलिखित अवधारित किया गया है –

“9. यह बिना सन्देह के सत्य है कि वंशीधर बनाम धिराजधारी, ए. आइ. आर. 1971 इला0 526 (एफ. बी.) में एकल न्यायाधीश के निर्णय में, और रधुनन्दन सिंह बनाम यशवन्त सिंह, 1978 आर. डी. 183 के निर्णय में, उच्च न्यायालय इलाहाबाद ने भिन्न दृष्टिकोण अभिमत किया है। पूर्ण पीठ के निर्णय में यह दृष्टिकोण लिया गया है कि यह उस तिथी से है जब धारा 137 के अन्तर्गत आदेश पारित किया गया कि सिरदार भूमिधर बनता है। वाद के दो प्रकरणों में, यह अवधारित किया गया है कि आवेदन दाखिल करने और भूमि राजस्व का भुगतान किये जाने के बाद यदि आवेदक मर जाता है, तब उसके नाम से प्रमाणपत्र मंजूरी नहीं किया जा सकता है। हमारे विचार से, उक्त निर्णय धारा 134 और 137 के अर्थ और साधारण भाषा जैसा समय के सुसंगत बिन्दु को माना गया, के विपरीत लागू किये गये हैं। जब धारा 137 के अन्तर्गत एक प्रमाणपत्र जारी किया जाता है यह वास्तव में जब जिस तिथी पर आवेदन किया गया है और धारा 134(1) के अन्तर्गत आपेक्षित धनराशि का भुगतान किया गया उस स्थिती को मान्यता प्रदान करती है। दूसरे शब्दों में, प्रमाणपत्र भूतलक्षी प्रभाव रखेगा और आवेदन की तिथी से सम्बन्धित होगा। धारा 134(1) के अन्तर्गत दृष्टिगत आवेदन जिस दिन इसे प्रस्तुत किया गया, राजस्व प्राधिकरण को इसे स्वीकृत करने से रोकने के लिए कुछ नहीं था।”

#### अस्वीकरण

“क्षेत्रीय भाषा में अनुवादित निर्णय वादी के अपनी भाषा में समझने हेतु निर्विधत प्रयोग के लिये हैं और किसी अन्य उद्देश्य के लिये प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी व्यावहारिक और सरकारी उद्देश्यों के लिये, निर्णय का अंग्रेजी संस्करण प्रामाणिक माना जायेगा तथा निष्पादन और क्रियान्वयन के उद्देश्यों के लिये मान्य होगा”।

10. अब हम इस दृष्टिकोण में हैं कि निचली अपीलीय अदालतों ने धारा 134 और 137 की सही व्याख्या की थी और उच्च न्यायालय उक्त निर्णय को खारिज करने में त्रुटि में था।

12. कानून के दृष्टिकोण में जैसा कि उपरोक्त निर्धारित है, उच्च न्यायालय इलाहाबाद के **राम सुबोध (सप्र)** वाद का निर्णय अपीलार्थी की सहायता नहीं कर सकता है। इस न्यायालय के **देव नन्दन एवं अन्य (सप्र)** के निर्णय में, वादी-प्रत्यर्थी वाद संख्या 31/1978 के सम्बन्ध में और सम्बन्धित प्लेट संख्या-521 के दावे को पूर्णतः सुरक्षा प्रदान करता है, जिसके सम्बन्ध में पुरषोत्तम की मृत्यु के बाद सनद दी गई। हमारे दृष्टिकोण में सहायक कमिशनर राजस्व परिषद और उच्च न्यायालय ने वाद संख्या 31/1978 को निर्देशित करने में कोई गलती नहीं की है।

13. अब हम वाद संख्या 30/1978 के सम्बन्धित वादी-प्रत्यर्थी के प्लेट संख्या 243 और 503 के दावे में आते हैं। उपरोक्त प्लेट में तथ्य उजागर होते हैं कि यद्यपि भूराजस्व का 20 गुना रकम जमा करने के लिए आवेदन 25.11.1974 को किया गया था। लेकिन सहायक कलेक्टर के द्वारा आवेदन को अस्वीकार कर दिया गया था। दिए गये आदेश को चुनौती देते हुए पुरषोत्तम के द्वारा पुनर्विचार याचिका दाखिल की गई, जो उस समय तक लम्बित थी जब उ० प्र० अध्यादेश संख्या 1/1977, कार्यवाहियों को उपशमित करने के लिए जारी किया गया था। उच्च न्यायालय ने अकिंत किया कि जब कार्यवाहियां उपशमित की गई थी तब पुरषोत्तम का भूमिधरी सनद प्राप्त करने का दावा पुनर्विचार याचिका में विचाराधीन था। यह आगे पाया गया कि कानूनी उत्तराधिकारियों, जो पुनर्विचार याचिका के अभिलेख में पाये गये थे, पुरषोत्तम की मृत्यु के कारण, वे मृतक की जायदाद का प्रतिनिधित्व करने में सक्षम थे। और मृतक के हित के प्रतिकूल कोई भी दावा नहीं कर सकते थे। उच्च न्यायालय ने पाया कि पुरषोत्तम जब मृत नहीं था, वह अध्यादेश संख्या 1/1977 के तहत भूमिधर की हैसियत प्राप्त कर चुका था और क्योंकि वह पहले ही 20 गुना राजस्व जमा करने के बाद विक्रय विलेख कार्यान्वित कर चुका था, जब उसने आवेदन किया और रकम को जमा किया यह प्राचीन दिनांक से सम्बन्धित होगा।

14. हमको पहले उ० प्र० अध्यादेश संख्या 1/1977 के प्रावधानों को देखना होगा, जिसे उच्च न्यायालय के द्वारा उल्लेखित किया गया था और जो वर्तमान वाद के तथ्यों

#### अस्वीकरण

“क्षेत्रीय भाषा में अनुवादित निर्णय वादी के अपनी भाषा में समझने हेतु निर्विधत प्रयोग के लिये हैं और किसी अन्य उद्देश्य के लिये प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी व्यावहारिक और सरकारी उद्देश्यों के लिये, निर्णय का अंग्रेजी संस्करण प्रामाणिक माना जायेगा तथा निष्पादन और क्रियान्वयन के उद्देश्यों के लिये मान्य होगा”।

से समन्वित है। हमने उपरोक्त में देखा कि धारा 134 को धारा 137 के साथ पढ़ने पर, एक सिरदार भूराजस्व का 20 गुना जमा करने के बाद और आवेदन करने से भूमिधारी सनद प्राप्त कर सकता है। जमींदारी विनाश और भूमी-व्यवस्था अधिनियम 1950 की धारा 130 और 131 को उ0प्र0 अध्यादेश संख्या 1/1977 – उ0प्र0 जमींदारी विनाश और भूमी-व्यवस्था (संशोधन) अध्यादेश के द्वारा प्रतिस्थापित किया गया है जो परिणामतः उ0प्र0 भूमि विधि (संशोधन) अधिनियम, 1977, अधिनियम के नाम से प्रभाव में आया, जिसमें निम्न प्रभाव आयें :-

### धारा 3: धारा 130 और 131 के प्रतिस्थापित होने पर —

मूल अधिनियम में धारा 130 और 131 के लिए मुख्यतः निम्न धाराएं प्रतिस्थापित की जायेंगी :-

**" 130. संकाम्य अधिकारों के साथ भूमिधर—** निम्नलिखित वर्गों में से किसी वर्ग का प्रत्येक व्यक्ति जो धारा 131 में निर्दिष्ट व्यक्ति न हो, संक्रमणीय (अन्तरणीय) अधिकार वाला भूमिधर कहा जायेगा और उसको वे सब अधिकार प्राप्त होंगे और वह उन सब दायित्वों के अधीन होगा जो इस अधिनियम के द्वारा या अधीन ऐसे भूमिधरों को प्रदत्त किये गये हों या उन पर आरोपित किये गये हो, अर्थात् —

(अ) प्रत्येक व्यक्ति जो उ0प्र0 भूमि विधि (संशोधन) अधिनियम, 1977, के आरम्भ होने की तिथि के ठीक पूर्व भूमिधर था:

(ब) प्रत्येक व्यक्ति जो उक्त तिथि से ठीक पूर्व , धारा 131 के जैसा यह उक्त तिथि के ठीक पूर्व थी खण्ड (क) और खण्ड (ग) में अभिदिष्ट, सिरदार था:

#### अस्वीकरण

"क्षेत्रीय भाषा में अनुवादित निर्णय वादी के अपनी भाषा में समझने हेतु निर्विधत प्रयोग के लिये है और किसी अन्य उद्देश्य के लिये प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी व्यावहारिक और सरकारी उद्देश्यों के लिये, निर्णय का अंग्रेजी संस्करण प्रामाणिक माना जायेगा तथा निष्पादन और क्रियान्वयन के उद्देश्यों के लिये मान्य होगा।"

(स) प्रत्येक व्यक्ति, जो इस अधिनियम के प्रावधानों के अधीन या अनुसार किसी अन्य ढंग से उक्त तिथि को या उसके पश्चात ऐसे भूमिधर का अधिकार प्राप्त कर लें :

**131. असंक्राम्य अधिकारों के साथ भूमिधर—** निम्नलिखित वर्गों में से किसी वर्ग का प्रत्येक व्यक्ति असंक्रमणीय (अनन्तरणीय) अधिकार वाला भूमिधर कहा जायेगा, और उसको वे सब अधिकार प्राप्त होंगे, और वह उन सब दायित्वों के अधीन होगा जो इस अधिनियम के द्वारा या अधीन ऐसे भूमिधरों को दिये गये हों या उन पर लगायें हों, अर्थात् :-

(अ) प्रत्येक व्यक्ति जिसे उत्तर प्रदेश भूमि विधि (संशोधन) अधिनियम, 1977 के प्रारम्भ की तिथि से पूर्व धारा 195 के अधीन कोई भूमि सीरदार के रूप में या उक्त तिथि को या उसके पश्चात उक्त धारा के अधीन असंक्रमणीय (अनन्तरणीय) अधिकार वाले भूमिधर के रूप में उठा दी जाय:

(ब) प्रत्येक व्यक्ति जो इस अधिनियम के प्रावधानों के अधीन या अनुसार किसी अन्य ढंग से उक्त तिथि को या उसके बाद ऐसे भूमिधर का अधिकार अर्जित कर ले:-

(स) प्रत्येक व्यक्ति जिसे उ0प्र0 भूदान यज्ञ अधिनियम, 1952, के अधीन कोई भूमि अवंटित हो या की जाय।

**15.** धारा 134 को उ0प्र0 भूमि विधि (संशोधन), 1977, अधिनियम के द्वारा हटा दिया गया था। वैधानिक रूप से प्रावधान का प्रभाव यह था कि भूमिधारी अधिकार, सीरदार को प्रदत्त हो गये थे, इस दिनांक 28.01.1977 से प्रभाव में आ गये , उ0प्र0 अध्यादेश संख्या 1/1977 को जारी करने का दिनांक है जो तत्पश्चात एक अनिधिनियम के रूप उ0प्र0 भूमि विधि (संशोधन) अधिनियम, 1977, के नाम से अधिनियमित हुआ, जो अध्यादेश के जारी करने की दिनांक 28.01.1977 को प्रभाव में आया।

#### अस्वीकरण

“क्षेत्रीय भाषा में अनुवादित निर्णय वादी के अपनी भाषा में समझने हेतु निर्विधत प्रयोग के लिये है और किसी अन्य उद्देश्य के लिये प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी व्यावहारिक और सरकारी उद्देश्यों के लिये, निर्णय का अंग्रेजी संस्करण प्रामाणिक माना जायेगा तथा निष्पादन और क्रियान्वयन के उद्देश्यों के लिये मान्य होगा”।

16. उ0प्र0 भूमि विधि (संशोधन), 1977, अधिनियम के सबसे महत्वपूर्ण प्रावधान धारा 73 को ध्यान देने की आवश्यकता है, जिसको क्षणिक प्रावधान के रूप में माना जाता है। जो इस प्रकार निम्न है :-

#### धारा – 73 संकमित प्रावधान

(1) तत्समय प्रवृत्त अन्य विधि में किसी बात के होते हुए भी, उत्तर प्रदेश जमींदारी विनाश और भूमि-व्यवस्था अधिनियम, 1950 की धारा 134 और 135, जैसा कि वें 28 जनवरी, 1977 के ठीक पूर्व थी, के अधीन भूमिधरी अधिकारों के अर्जन के लिए सभी कार्यवाहियां और उससे उत्पन्न होने वाली सभी कार्यवाहियों जो ऐसे दिनांक को किसी न्यायालय या प्राधिकारी के समक्ष विचाराधीन हों, उपशमित हो जायेंगी।

(2) जहां कोई कार्यवाही उपधारा (1) के अधीन उपशमित हो गयी हो वहां ऐसे अधिकारों का अर्जन करने के लिये जमा की गयी धनराशि यथास्थिति, जमा करने वाले व्यक्ति या उसके विधिक प्रतिनिधियों को वापस कर दी जायेगी।

17. धारा 73(1), उत्तर प्रदेश जमींदारी विनाश और भूमि-व्यवस्था अधिनियम, 1950 की धारा 134 और 135 के तहत, जैसा कि वें 28 जनवरी, 1977 के ठीक पूर्व थी, के अधीन भूमिधरी अधिकारों के अर्जन के लिए सभी कार्यवाहियां और उससे उत्पन्न होने वाली सभी कार्यवाहियों जो ऐसे दिनांक को किसी न्यायालय या प्राधिकारी के समक्ष विचाराधीन हों, उपशमित हो जायेंगी।

18. उच्च न्यायालय के द्वारा अपने निर्णयों में अकिंत किया गया जैसा कि, 23.05.1975 दिनांकित आदेश के विरुद्ध पुनर्विचार याचिका में भूमिधारी सनद के अनुमति की अस्वीकृती जो अध्यादेश संख्या 1/1977 के गुणों द्वारा उपशमित कर दी गई। सबसे महत्वपूर्ण धारा 73(2) है जिसमें कोई कार्यवाही उपधारा (1) के अधीन उपशमित हो गयी हो वहां ऐसे अधिकारों का अर्जन करने के लिये जमा की गयी धनराशि यथास्थिति, जमा करने वाले व्यक्ति या उसके विधिक प्रतिनिधियों को वापस कर दी जायेगी।

#### अस्वीकरण

“क्षेत्रीय भाषा में अनुवादित निर्णय वादी के अपनी भाषा में समझने हेतु निर्विधत प्रयोग के लिये है और किसी अन्य उद्देश्य के लिये प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी व्यावहारिक और सरकारी उद्देश्यों के लिये, निर्णय का अंग्रेजी संस्करण प्रामाणिक माना जायेगा तथा निष्पादन और क्रियान्वयन के उद्देश्यों के लिये मान्य होगा”।

19. इस प्रकार, उ0प्र0 अधिनियम संख्या 8/1977 के धारा 73 की उपधारा (2) पर विचार किया गया कि, भूमिधारी सनद की अनुमति से सम्बन्धी सभी कार्यवाहियां उपशमित की जायेंगी और व्यक्ति को अथवा उसके विधिक प्रतिनिधियों को जमा की धनराशि वापस कर दी जायेगी। उक्त प्रावधानों का परिणाम यह है कि पुर्नविचार याचिका, जो पुरुषोत्तम के द्वारा दाखिल की गई थी, को उपशमित कर दिया गया और जमा की गई धनराशि को उसके विधिक प्रतिनिधियों को वापस कर दी जाय। इस प्रकार दिनांकित 25.11.1974 के पुरुषोत्तम का आवेदन के आधार पर, प्लॉट संख्या 243 और 503, के भूमिधारी अधिकारों को पाने का दावा, जैसा कि धारा 73 के प्रावधानों के गुणों के द्वारा समाप्त किया जाता है। जैसा कि उक्त निर्देशों के अनुरूप धारा 73 के प्रावधानों के दृष्टिकोण में दिनांकित 25.11.1974 के पुरुषोत्तम का आवेदन के आधार पर भूमिधारी अधिकारों को पाने का दावा अस्वीकार कर दिया जाता है। इसलिए, पुर्नविचार याचिका के लम्बित होने का लाभ पुरुषोत्तम के द्वारा नहीं लिया जा सका और उच्च न्यायालय ने अध्यादेश संख्या 1/1977 के तहत नियमों के सम्पादन में गलती किया, क्रमशः पुरुषोत्तम पहले ही लाभान्वित हो चुका था।

20. धारा 73 के वैधानिक प्रावधानों के द्वारा, सभी लम्बित आवेदनों और प्रक्रियाओं को उपशमित किया गया और भूमिधारी अधिकारों की अनुमति, धारा 130 और 131 के तहत विचारित किये जाते थे, जिसको उ0प्र0 अध्यादेश संख्या 1/1977 में सम्मिलित करने की माँग की गई थी। वैधानिक प्रावधानों का लाभ उन सिरदारों के उपर लागू होगा, जो अध्यादेश के लागू होने के दिनांक में सिरदार थे, जो क्रमशः एक अधिनियम बना। 28.01.1977 के पहले पुरुषोत्तम की मृत्यु हो गई थी, और उसके विधिक उत्तराधिकारियों को उसके स्थान पर स्थानान्तरित कर दिया गया था, इस प्रकार अध्यादेश संख्या 1/1977 और उ0प्र0 अधिनियम संख्या 8/1977 का लाभ पुरुषोत्तम प्राप्त नहीं कर सका, इसलिए उसके प्लॉट संख्या 243 और 503 के दिनांकित 16.11.1974 के विक्रय विलेख को मान्य किया जाय। इस प्रकार उच्च न्यायालय ने विरोधी प्रत्यर्थी के द्वारा दाखिल किये गये रिट याचिका को अनुमति प्रदान कर और वाद संख्या 30/1978 को डिक्री प्रदान कर गलती की गई।

21. प्रत्यर्थी संख्या-3 के द्वारा दाखिल की गई रिट याचिका से सम्बन्धित वाद संख्या 30/1978 में निचली अदालतों के निर्णय में प्रश्न करना, उच्च न्यायालय

#### **अस्वीकरण**

“क्षेत्रीय भाषा में अनुवादित निर्णय वादी के अपनी भाषा में समझने हेतु निर्विधत प्रयोग के लिये है और किसी अन्य उद्देश्य के लिये प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी व्यावहारिक और सरकारी उद्देश्यों के लिये, निर्णय का अंग्रेजी संस्करण प्रामाणिक माना जायेगा तथा निष्पादन और क्रियान्वयन के उद्देश्यों के लिये मान्य होगा”।



के द्वारा अनुमति देने योग्य नहीं था। सभी निचली अदालतों और राजस्व परिषद सहित, प्रत्यर्थी के द्वारा दाखिल वाद संख्या 30/1978 के सम्बन्ध में सही दृष्टिकोण लिया गया था।

22. उत्तर में, अपील को आंशिक रूप से अनुमति प्रदान की जाती है। जहाँ तक उच्च न्यायालय में अयुधि @ अयोध्या द्वारा दाखिल रिट याचिका संख्या. 3020/1984 के निर्णय को अनुमति देता है को अपास्त किया जाता है। जहाँ तक उच्च न्यायालय के निर्णय में खारिज की रिट याचिका संख्या को स्वीकृत किया जाता है। परिणामतः निचली अदालतों ने प्रत्यर्थी अयुधि @ अयोध्या के वाद संख्या 31/1978 के निर्णय में डिक्री को बनाये रखता है, जबकी उच्च न्यायालय के वाद संख्या 30/1978 के निर्णय की डिक्री को अपास्त किया जाता है। प्रत्यर्थी अयुधि @ अयोध्या के वाद संख्या 30/1978 को खारिज किया जाता है। तदनुसार अपील निर्णीत की जाती है। पक्षकार अपनी लागत स्वयं धारण करेंगे।

.....  
(न्यायमूर्ती अशोक भूषण,)

.....  
(न्यायमूर्ती के. एम. जोसेफ,)

नई दिल्ली,  
08 मार्च, 2019,

**अस्वीकरण**  
“क्षेत्रीय भाषा में अनुवादित निर्णय वादी के अपनी भाषा में समझने हेतु निर्विधत प्रयोग के लिये है और किसी अन्य उद्देश्य के लिये प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी व्यावहारिक और सरकारी उद्देश्यों के लिये, निर्णय का अंग्रेजी संस्करण प्रामाणिक माना जायेगा तथा निष्पादन और क्रियान्वयन के उद्देश्यों के लिये मान्य होगा”।